2.2 (अ) (i) यजुर्वेद – शिव संकल्प सूक्त (अध्याय 34)

यज्जाग्रतो दुरमुदैति दैवं

तदु सुप्तस्य तथैवैति।

दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। 1।।

अन्वय – यत् जाग्रतः दूरं दैवं तत् सुप्तस्य तथा एव ऐति दूरंगम ज्योतिषां एकं ज्योतिः तत् मे मनः शिवसंकल्पम् अस्तु।

संदर्भ – प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के चौंतीसवे अध्याय से उद्धृत है। इस अध्याय के छः मंत्रों में मन की महानता का वर्णन किय गया है। मन्त्र द्रष्टा ऋषि ने मन से हाने वाली सभी क्रियाओं का यथोचित अवलोकन कर उसे भूत, भविष्यत् और वर्तमान का ज्ञाता कहा है, ऋषि कहते है–

अनुवाद– जो मन पुरुष की जाग्रत अवस्था में नेत्रादि ज्ञानेन्द्रियों से अधिक दूर जाता है। जो आत्मदर्शन करने वाला है, जो पुरुष की सुषुप्ति अवस्था में उसी प्रकार लौट आता है (जिस प्रकार जाग्रत अवस्था में दूर जाता हैं) जो दूर जाने वाला है, जो सब बाह्य इन्द्रियों का एकमात्र प्रकाशक है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।

टिप्पणी–

(i) इसमें मन देवता, याज्ञवल्क्य ऋषि एवं त्रिष्टुप् छन्द है।

(ii) दूरंगमम्– अर्थात अतीत, अनागत, वर्तमान सब पदार्थो को जानने वाला।

(iii) इसमें मन से होने वाली क्रियाओं का ज्यों का त्यों वर्णन हुआ है।

व्याकरण– जागृ + शतृ + ष.ए.व. – जाग्रतः। उत् + आ + इ + लट् प्र.पु.ए.व. – उदैति।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो

यज्ञे कृण्वन्ति विदधेषु धीराः।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। 2।।

अन्वय – येन (मनसा) अपसः मनीषिणः धीराः यज्ञे विदथेषु व कर्माणि कृण्वन्ति यद् अपूर्व यज्ञं, प्रजानाम् अन्तः तत् मे मनः शिवसंकल्पम् अस्तु।

संदर्भ – प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के 34 वें अध्याय से उद्धृत है। इस अध्याय के 6 मंत्रों में मन की महानता का वर्णन किया गया है। मंत्र द्रष्टा ऋषि ने मन से होने वाली सभी क्रियाओं का यथोचित अवलोकन कर उसे भूत भविष्यत् और वर्तमान का ज्ञाता कहा है। ऋषि मन का वर्णन करते हुए कहते है–

अनुवाद– जिस मन से कर्मनिष्ठ बुद्धिमान मेधावी पुरुष यज्ञ में तथा पूजाओं में कर्म करते है, जो सबसे पहले उत्पन्न होता है, जो यज्ञ करने में समर्थ है, जो प्राणीभाग के भीतर रहता है वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।

टिप्पणी–

(i) इसमें मन देवता, याज्ञवल्क्य ऋषि एवं त्रिष्टुप् छन्द है।

(ii) अपूर्वं– यह कहकर मन की शाश्वतता सिद्ध की है।

व्याकरण– कृ + लट् + प्र. पु. ब. व. – कृण्वन्ति।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च

यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।

यस्मान्न ऋते किं च न कर्म क्रियते

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। 3।।

अन्वय – यत् प्रज्ञानम् उत चेतः धृतिः च यत् प्रजासु अमृतं ज्योतिः यस्मात् ऋते किंचन कर्म क्रियते न। तत् मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।

संदर्भ – प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के 34 वें अध्याय से उद्धृत है। इस अध्याय के छः मंत्रों में मन की महानता का वर्णन किया गया है। मन्त्र द्रष्टा ऋषि ने मन से होने वाली समस्त क्रियाओं का अवलोकन कर उसे भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान का ज्ञाता कहा है। इसी प्रसंग में ऋषि मन की महानता बताते हुए कहते है–

अनुवाद– जो विशेष ज्ञान तथा सामान्य ज्ञान का साधन है, जो धैर्यरूप है, जो प्राणियों के भीतर अमर ज्योति है, जिसके बिना कुछ भी कर्म नहीं किये जाते, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।

टिप्पणी–

(i) इसमें मन देवता, याज्ञवल्क्य ऋषि एवं त्रिष्टुप् छन्द है।

(ii) इसमें मन की सर्वव्यापकता बताई गई है।

येनेदं भूतं भवनं भविष्य

त्परिं गृहीतममृतेन सर्वम्।

येन यज्ञस्तायते सप्तहोता

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। 4।।

अन्वय – येन अमृतेन (मनसा) इदं भूत, भविष्यत् भुवनं सर्वं परिगृहितम् येन सप्तहोता यज्ञः तायते तत् मे मनः शिवसंकल्पम् अस्तु।

संदर्भ– प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के चौतीसवें अध्याय से गृहीत हैं। इस अध्याय के छः मंत्रों में मन की महानता का वर्णन किया गया है। मंत्रद्रष्टा ऋषि ने मन से होने वाली समस्त क्रियाओं का अवलोकन कर उसे भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान का ज्ञाता कहा है। ऋषि कहता है–

अनुवाद– जिस अमर मन के द्वारा इस संसार में भूत, भविष्यत् ओर वर्तमान काल के सभी पदार्थ जाने जाते है। जिस मन से सात होता वाला अग्निष्टोम यज्ञ किया जाता है। वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।

टिप्पणी–

(i) इसमें मन देवता, याज्ञवल्क्य ऋषि एवं त्रिष्टुप् छन्द है।

व्याकरण– भू+क्त– भूतम्। परि + गृह् + क्त– परिगृहीतम्। तन+आ. लट् प्र.पु.ए.व.–तायते। भू+ल्युट्– भुवनम्। सप्त+हु + तृच् – सप्तहोता

यस्मिनृचाः साम यजूंषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।

यस्मिन्श्चित्तंसर्वमोतं प्रजानांतन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। 5।।

अन्वय – रथनाभौ अराः इव यस्मिन् ऋचाः साम यजूंषि प्रतिष्ठिता, यस्मित् प्रजानां सर्वं चित्तं ओतं तत् मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।

संदर्भ– प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के चौतीसवें अध्याय से उद्धृत हैं। इस अध्याय के छः मंत्रों में मन की महानता का वर्णन किया गया है। मंत्र द्रष्टा ऋषि ने मन से होने वाली समस्त क्रियाओं का यथोचित अवलोकन कर उसे भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान का ज्ञाता कहा है। ऋषि कहता है–

अनुवाद– रथचक्र की नाभि में तिल्लियों की तरह जिस मन में ऋचाएँ साम तथा यजुष् प्रतिष्ठित है। जिस (मन) में प्राणियों का सर्वपदार्थविषयक ज्ञान निहित है, वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला है।

टिप्पणी–

(i) इसमें मन देवता, याज्ञवल्क्य ऋषि एवं त्रिष्टुप् छन्द है।

(ii) यहां द्रष्टा ने मन को रथ की सुन्दर उपमा दी है।

व्याकरण– प्रति + स्था + क्त– प्रतिष्ठिता। आ + अव् + क्त– ओतम्।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्या
न्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। 6।।

अन्वय – यत् मनुष्यान् नेनीयते इव सुसारथिः अश्वान् अभिशुभिः वाजिनः इव यत् हृत्प्रतिष्ठं यत् अजिरं जविष्ठं तत् मे मनः शिवसंकल्पम् अस्तु।

संदर्भ– प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के चौतीसवें अध्याय से उद्धृत हैं। इस अध्याय के छः मंत्रों में मन की महानता का वर्णन किया गया है। मंत्र द्रष्टा ऋषि ने मन से होने वाली समस्त क्रियाओं का यथोचित अवलोकन कर उसे भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान का ज्ञाता कहा है। ऋषि उसी मन का वर्णन करते हुए कहता है–

अनुवाद– जो मन मनुष्यों को बार–बार इधर–उधर प्रेरित करता है, जैसे अच्छा सारथी घोड़ों को ओर लगामों द्वारा घोड़ों की तरह अपने वश में रखता है। जो हृदय में स्थित है, जो जरारहित एवं अत्यन्त वेगवान है। वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

टिप्पणी–

(i) इसमें मन देवता, याज्ञवल्क्य ऋषि एवं त्रिष्टुप् छन्द है।

व्याकरण– नी+लट्+ब्र. पु.ए.व. – नेनीयते।

2.2 (अ) (ii) यजुर्वेद – पुरुष सूक्त (अध्याय 31)

सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।
स भूमिम् सर्वतः वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।। 1।।

अन्वय – पुरुषः सहस्रशीर्षा, सहस्राक्षः, स्रहस्रपातः सः भूमि सर्वतः वृत्वा दशाङगुलम् अति अतिष्ठत्।

संदर्भ– प्रस्तुत मंत्र शुक्ल यजुर्वेद के इक्कतीसवें अध्याय से उद्घृत है। इस अध्याय के सोलह मंत्रों में परम पुरुष का वर्णन किया गया है। इसे सृष्टि का स्रष्टा माना गया है। वह सर्व प्रथम उत्पन्न हुआ, तथा उसने ही इन सम्पूर्ण जीव जन्तुओं को उत्पन्न किया, उसने ही समस्त ग्रहों, अतिग्रहों तथा ब्रह्माण्डों की रचना की। वह अन्न धन को देने वाला एवं सबका शासक है। ऋषि उसके वर्णन में कहता हैं –

अनुवाद– परम पुरुष असंख्य शिर वाला, असंख्य आँखों वाला तथा असंख्य पैरों वाला है। वह पृथिवी को चारों ओर से व्याप्त करके दश अंगुल प्रमाण में अधिक स्थित है।

टिप्पणी–

(i) इसमें पुरुष देवता, नारायण ऋषि एवं अनुष्टुप् छन्द है।

(ii) यहाँ पर शिर, आंख और पैर से क्रमशः ब्रह्म की इन तीन शक्तियों की ओर संकेत किया गया है–(1) ज्ञान, अनुभव (2)दर्शन, निरीक्षण (3)गति, धारण

(iii) पुरि शेते इति पुरुषः। सभी प्राणियों का समष्टिभूत ब्रह्माण्ड देहधारी विराट् नामक पुरुष।

व्याकरण– स्था + लङ प्र.पु.ए.व. – अतिष्ठत्। सर्व + तसिल् – सर्वतः।

पुरुष एवेदं सर्व यद् भूतं यच्च भव्यम्।